बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 9

एफडीआई की समस्या

ऐसा प्रतीत हो रहा है कि भारतीय अर्थव्यवस्था विदेशी निवेशकों के लिए आकर्षक नहीं रह गई है। उद्योग एवं आंतरिक व्यापार संवर्द्धन विभाग (डीपीआईटीटी) की ओर से हाल ही में जारी आंकड़ों से यही संकेत निकलता है। आंकड़े बताते हैं कि अप्रैल से दिसंबर 2018 के बीच देश में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) घटकर 33.5 अरब डॉलर रह गया जबकि वर्ष 2017 की समान तिमाही में यह 36 अरब डॉलर था। इन आंकड़ों को जारी करने में काफी लंबी और रहस्यमय देरी हुई है। जबकि तथ्य यही है कि भारतीय रिजर्व बैंक नियमित रूप से डीपीआईटीटी से जुड़े आंकड़े दे रहा था। यह अब तक स्पष्ट नहीं है कि आंकड़ों को इतने लंबे समय तक एकत्रित क्यों किया गया।

इन आंकड़ों में सरकार के लिए ऐसा परीक्षण छिपा हुआ है जिसकी वह अनदेखी नहीं कर सकती। राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की सरकार के शुरुआती वर्ष एफडीआई के लिए अच्छे थे। पिछली सरकार नीतिगत पंगुता की शिकार थी और नई सरकार के आगमन के बाद आर्थिक संभावना को लेकर उत्सुकता का माहौल था। सरकार ने उस गतिशीलता का पूरा श्रेय लिया। अगर वह रुख अब बदल गया है तो उसकी जिम्मेदारी भी सरकार को ही लेनी चाहिए। भारतीय रिजर्व बैंक के आंकड़े बताते हैं कि वर्ष 2017-18 में आंतरिक एफडीआई केवल 3 फीसदी बढ़ा जबकि 2014-15 में यह 25 फीसदी बढ़ा था। अन्य अनाधिकारिक संकेतक भी अर्थव्यवस्था में भरोसा कम होने की बात का समर्थन करते हैं। भारत 2018 के ताजातरीन एटी कियर्नी एफडीआई कॉन्फिडेंस इंडेक्स में तीन स्थान नीचे फिसल कर वर्ष 2015 के बाद पहली बार 10 देशों की सूची से बाहर हो गया है।

इस मंदी को किस प्रकार समझा जा सकता है ? यह बात सही है कि वर्ष 2018 में वैश्विक एफडीआई में 19 फीसदी की गिरावट आई। यह आंकड़ा संयुक्त राष्ट्र व्यापार एवं विकास सम्मेलन (यूएनसीटीएडी) की ओर से जारी किया गया। इसके लिए कुछ हद तक बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा धनराशि स्वदेश भेजा जाना भी जिम्मेदार है। परंतु हमारे समकक्ष देशों का प्रदर्शन इतना बुरा नहीं रहा। उदाहरण के लिए दक्षिण पूर्वी एशिया के देशों में एफडीआई की आवक 11 फीसदी बढ़कर 145 अरब डॉलर तक पहुंच गई। यह समूचे दक्षिण एशिया के कुल अर्जित एफडीआई के लगभग तीन गुना के बराबर है। ऐसे में भारत के संदर्भ में यह स्पष्ट करना होगा कि आखिर एफडीआई में गिरावट क्यों आई। सरकार को इस बारे में वस्तुस्थिति स्पष्ट करनी होगी। अगर सरकार की ओर से कोई जवाब नहीं आता है तो अधिकांश पर्यवेक्षक यही मानकर चलेंगे कि देश को लेकर सॉवरिन जोखिम से जुड़े जोखिम खत्म नहीं हुए हैं। ई-कॉमर्स नीति को लेकर पहले मसौदे में कहा गया है कि ई-कॉमर्स क्षेत्र के उन कारोबारियों को अधिक सख्त नियमन का सामना करना पड़ेगा जिनमें विदेशी निवेश होगा। इसका असर निवेशकों और उपभोक्ताओं दोनों पर पड़ेगा। यह इस बात को दर्शाता है कि देश में नीति संचालित सॉवरिन जोखिम किस तरह के हैं और एफडीआई को किस तरह हतोत्साहित किया जा रहा है। कई बड़े निवेशक देश में ई-कॉमर्स में आ चुके हैं और इस बीच सरकार ने नियम बदल दिए हैं। दूसरा मसौदा जो शनिवार को जारी किया गया वह भी इस पहलू पर कुछ खास नहीं करता। विश्व बैंक के कारोबारी सुगमता सूचकांक में भारत की स्थिति चाहे जितनी बेहतर हो रही हो लेकिन निवेशकों की अनुकूलता की स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ है। अब यह अगली सरकार पर निर्भर करता है कि निवेशक समुदाय हमसे दूर न हो और एफडीआई की आवक ऊंची और स्थायित्व भरी हो।

अजय मोहंती

मजबूत जनसंख्या नीति से होगा गरीबी उन्मूलन

भारत, जनसंख्या वृद्धि की समस्या से गंभीरतापूर्वक निपटने में नाकाम रहा है और इसकी वजह से हम गरीबी उन्मूलन के वैश्विक औसत तक पहुंचने में नाकाम रहे हैं। जानकारी दे रहे हैं **पार्थसारथि शोम**

गत माह मैंने अपने आलेख में चीन के जनसंख्या नियंत्रण का जिक्र करते हुए कहा था कि वह अपनी जनसंख्या नियंत्रण नीति की बदौलत सन 1960 के दशक के अंत से ही प्रति व्यक्ति जीडीपी वृद्धि के मामले में निरंतर भारत से आगे बना रहा। दोनों देशों के बीच जीडीपी वृद्धि दर का वह अंतर आज भी कायम है और चीन को निरंतर नई ऊंचाइयों पर ले जा रहा है। बीच के दशकों में चीन एक-एक करके सभी आर्थिक और सामाजिक-आर्थिक संकेतकों पर भारत से काफी ऊपर निकल गया। हां, जैसा कि मैं पहले भी जिक्र कर चुका हूं, केवल मानवाधिकार के मामले में चीन भारत से आगे नहीं निकल सका।

अगर हम विभिन्न देशों की आबादी में होने वाली वृद्धि के बरअक्स उन देशों की जीडीपी वृद्धि दर और प्रति व्यक्ति जीडीपी को रखकर देखें तो एक अलग ही तस्वीर नजर आती है। एक तरह से देखा जाए तो जनसंख्या नियंत्रण की स्थिति में जीडीपी वृद्धि में स्पष्ट सुधार देखने को मिलता है जबकि अगर नियंत्रण न हो तो जीडीपी में गिरावट साफ नजर आती है। इस प्रभाव को साफ तौर पर महसूस किया जा सकता है। सन 1969 से 2017 के बीच भारत का प्रदर्शन जहां कुछ हद तक ही बेहतर हो सका, वहीं सन 2010 तक चीन के प्रदर्शन में बेमिसाल ढंग से सुधार आया। सन 2010 के बाद चीन के प्रदर्शन में कुछ गिरावट आई है। इसके लिए हाल के कुछ वर्षों में चीन द्वारा जनसंख्या नीति में बरती गई नरमी को उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। साफ जाहिर है कि एक लक्षित और सार्थक जनसंख्या नीति की मदद से भारत अपने प्रति व्यक्ति जीडीपी और उसमें होने वाली वृद्धि, दोनों में अच्छा खासा सुधार कर सकता है।

इतना ही नहीं जनसंख्या से प्रभावित होने वाला एक अन्य प्रमुख संकेतक है एक्सट्रीम पॉवर्टी हेडकाउंट रेश्यो (ईपीएचआर)। इसका आकलन इस आधार पर किया गया है कि आखिर किसी देश की कितनी आबादी प्रति दिन 1.90 डॉलर से कम आय पर गुजारा कर रही है। यह आकलन सन 1980 से 2015 तक की अवधि के लिए किया गया है। सन 1981 में चीन की 89 फीसदी आबादी इस मानक के नीचे जीवन बिता रही थी जबकि उस वक्त तक भारत की केवल 57 फीसदी आबादी ऐसी थी जो 1.90 डॉलर रोजाना से कम आय पर जी रही थी। उस समय ऐसे लोगों का वैश्विक औसत महज 42 फीसदी था। ब्राजील 21 फीसदी के आंकड़े के साथ इस स्तर से बहुत बेहतर स्थिति में था। परंतु चीन ने अपनी स्थिति में जबरदस्त सुधार करते हुए 2000 के दशक तक भारत को पीछे छोड़ दिया। सन 2015 तक ईपीएचआर संकेतक के मामले में भारत की आबादी का 13.4 फीसदी, ब्राजील की आबादी का 3.4 फीसदी और चीन की आबादी का 0.7 फीसदी इस दायरे में था।

इस समय वैश्विक औसत 10 फीसदी था। इस लिहाज से देखा जाए तो भारत वैश्विक औसत से खराब हालत में था जबकि चीन इस संकेतक से कमोबेश गायब ही था। चीन की हालत में यह सुधार उसके आर्थिक प्रदर्शन में आए सुधार की बदौलत था। यह सुधार उसने आबादी को नियंत्रित कर हासिल किया।

एक आकलन सन 1981 से 2015 के बीच ईपीएचआर के दायरे में आने वाले लोगों का भी है। वैश्विक स्तर पर सन 1981 में करीब 1.9 अरब लोग अत्यधिक गरीब की श्रेणी में आने वाले थे। परंतु, सन 2015 में यह आंकड़ा सुधरकर 73.6 करोड़ रह गया। यानी 35 वर्ष में इसमें कुल मिलाकर 61 फीसदी की कमी आई। चीन में इस अवधि में आंकड़ा 87.8 करोड़ से घटकर एक करोड़ पर आ गया यानी उसने 99 फीसदी की कमी की। भारत 40.9 करोड़ से घटकर 17.5 करोड़ पर आया यानी 57 फीसदी की कमी। लेकिन भारत के मामले में यह कमी औसत से कम थी। समान अवधि में ब्राजील में यह आंकड़ा 3.6 करोड़ से घटकर 70 लाख पर आ गया। यह कमी 74 फीसदी थी जिसे वैश्विक औसत की तुलना में काफी बेहतर प्रदर्शन करार दिया जा सकता है। इन तीन देशों में केवल भारत का प्रदर्शन ही वैश्विक औसत से नीचे रहा। कहा जा सकता है कि आबादी पर नियंत्रण न रख पाना भारत के कमजोर प्रदर्शन की एक वजह रहा। व्यक्तिगत स्तर पर आर्थिक स्थिति में सुधार से जहां जन्म दर कम करने में मदद मिलती है, वहीं इसके ठीक उलट कम जन्म दर के कारण आर्थिक समृद्धि आती है और गरीबी में कमी आती है। विभिन्न देशों में हुए शोध इस दो दिशाओं वाले रिश्ते को स्पष्ट करते हैं। उदाहरण के लिए पूर्वी एशिया और दक्षिण पूर्वी एशिया जिसमें थाईलैंड, इंडोनेशिया और हिंद-चीन क्षेत्र के देशों में पिछले 25 वर्ष के दौरान जन्म दर में काफी गिरावट आई है। जनसंख्या मामलों के विशेषज्ञ माने जाने वाले स्टीवन सिंडलिंग इस बात की पुष्टि करते हैं कि इन देशों में गरीबी में कमी और जीवन स्तर में सुधार के लिए काफी हद तक उनकी सफल जनसंख्या नियंत्रण नीति को श्रेय दिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त कई अन्य समाज विज्ञानी अफ्रीका से भी ऐसे प्रमाण प्रस्तुत कर रहे हैं। फिलहाल एक बात साफतौर पर कही जा सकती है कि दुनिया के कई देशों को इन नीतियों को अपनाने की आवश्यकता है।

भारत गरीबी के भंवर से तभी बाहर निकल सकता है जबकि देश में जनसंख्या को नियंत्रित किया जा सके और आर्थिक नीतियां सब्सिडी को नहीं बल्कि वृद्धि को बढ़ावा देने वाली हों। एक सुझाव तो यह भी है कि वित्त आयोग को भी जनसंख्या वृद्धि दर को केंद्र राज्य की राजस्व साझेदारी में नकारात्मक मानक के रूप में दर्ज करना चाहिए।

अगले कुछ महीनों में देश में आम चुनाव होने वाले हैं। इन चुनावों के दौरान विभिन्न राजनीतिक दलों को अपनी-अपनी पार्टी के घोषणापत्रों में जनसंख्या नियंत्रण नीति को स्पष्ट रूप से शामिल करना चाहिए। जनसंख्या नियंत्रण के लिए जरूरत के मुताबिक प्रोत्साहित करने और हतोत्साहित करने वाले उपायों का भी प्रयोग करना चाहिए। अगर समय रहते कदम नहीं उठाए गए तो देश की आबादी बढ़ती रहेगी और आने वाले बच्चे गरीबी का जीवन जीने को अभिशप्त होंगे।

बदलते हुए दौर में कारगर नहीं होगा मध्यवर्गीय पर्यावरणवाद

जमीनी हकीकत

सुनीता नारायण

मैंने कुछ हफ्ते पहले यह सवाल पूछा था कि भारत जैसा देश क्या आर्थिक वृद्धि एवं स्थायित्व के पुराने रास्ते पर चलने का खतरा उठा सकता है या उसे नई राह अपनानी होगी ? मैंने यह भी कहा था कि अलग तरीके से वृद्धि करने की चाह कम है लेकिन ऐसा होना चाहिए।

हमारे सिर तक पहुंच चुके कृषि संकट पर गौर कीजिए। आज किसान का चेहरा खबरों में है। यह साफ है कि अतीत एवं वर्तमान की सरकारों ने इस दिशा में जो भी कदम उठाए हैं, वे कारगर नहीं हो रहे हैं। भारतीय किसान दोहरी मार झेल रहा है। एक तरफ खाद्य उत्पादों की उपज में आने वाली लागत बढ़ रही है क्योंकि उत्पादन में लगने वाली वस्तुओं की कीमतें बढ़ गई हैं। मौसम के बदलते एवं तीखे होते मिजाज ने भी किसानों की उपज पर असर डाला है। दूसरी तरफ सरकारें महंगाई स्तर को काबू में रखने के लिए खाद्य उत्पादों की कीमतें कम चाहती हैं। सरकार को सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) के तहत बड़े पैमाने पर अनाज की खरीद भी करनी होती है, लिहाजा वह उनकी कीमतें नियंत्रण में चाहती हैं। कृषि उत्पादकों के लाभ देने या मार्केटिंग सहयोग देने वाले ढांचागत क्षेत्र में भी बहुत कम निवेश हुआ है। जलवायु परिवर्तन और लगातार बदलते मौसम के चलते खेती के काम में जोखिम बढ़ गया है।

सुस्थापित आर्थिक शब्दकोशों का यह दृढ़ विश्वास है कि खेती अब या तो अनुत्पादक हो गई है या कम-उत्पादक रह गई है और इसे तगड़ा धक्का लगाने की जरूरत है। कहा जाता है कि इस अनुत्पादक कारोबार से इतनी बड़ी संख्या में भारतीय लोग जुड़े हुए हैं कि यह कारगर हो ही नहीं सकती है।

लेकिन यह दलील कोई जवाब नहीं है। अगर खाद्यान्न उपजाने वाला कारोबार यानी खेती से लोगों को रोजगार नहीं मिलेगा तो फिर कौन रोजगार देगा? हम जितनी शिद्दत से औपचारिक अर्थव्यवस्था को अपनाना चाहते हैं, वह रोजगार को छोड़कर बाकी सभी नजरिये से अच्छी है। हमें इसका अहसास है।

हमें इस कृषि संकट के शहरी परिदृश्य को भी पहचानना होगा। आज अगर जमीन, पानी या जंगल का आजीविका के लिहाज से कोई भविष्य नहीं है तो लोगों के पास शहरी इलाकों में प्रवास के सिवाय कोई चारा नहीं है। शहरी इलाकों में कामगारों की संख्या बढ़ने से सेवा एवं प्रदूषण की समस्या भी बढ़ेगी। सच तो यह है कि मौजूदा शहरी वृद्धि कानूनी दायरे में संचालित होने वाले आवासीय एवं वाणिज्यिक प्रतिष्ठानों के 'वैध' क्षेत्रों में नहीं हैं। शहर अवैध क्षेत्रों में विस्तारित हो रहे हैं जहां पर तमाम आवासीय एवं वाणिज्यिक गतिविधियां सरकारी अनुमति के बगैर ही चल रही हैं। विडंबना ही है कि अर्थव्यवस्था को औपचारिक बनाने के लिए सरकार जितनी मेहनत कर रही है, हालात लोगों को उतनी ही तेजी से गैरकानूनी एवं अनौपचारिक कारोबार की ओर धकेल रहे हैं।

पर्यावरण संरक्षण के मामले में भी यही बात लागू होती है। भारत के संदर्भ में, हम किसी अन्य देश पर अपनी पर्यावरणीय लागत नहीं डाल सकते हैं। लेकिन हम इसे औपचारिक कारोबार और संगठित औद्योगिक क्षेत्र में सक्रिय इकाइयों से अनधिकृत एवं रिहायशी इलाकों से बाहर ले जाने की कोशिश करते हैं। अब कारोबार भी प्रदूषण फैलाता है लेकिन वह नियामकों के दायरे से बाहर है। नियमन की लागत के चलते शासन महंगा हो जाता है और भारत जैसा देश इसका बोझ नहीं उठा सकता है। इसके चलते प्रदूषण बढ़ता जाता है और उसी के साथ खराब सेहत का दायरा भी बढ़ता है।

लेकिन यह भी साफ है कि भारत जैसे देश में गरीब का पिछवाड़ा अमीर के अगवाड़े से जुदा नहीं है। कारोबार के गैरकानूनी होने पर उसके उत्सर्जन का नियमन करना अधिक चुनौतीपूर्ण हो जाता है। इसी वजह से हवा प्रदूषित हो रही है। इसकी चपेट में गरीब और अमीर दोनों आते हैं। सीवेज एवं औद्योगिक नालों के मामले में भी यही स्थिति है। गरीबों का गैरकानूनी निपटान अमीरों के शोधित कचरों से मिलकर नदियों को खत्म कर रहा है। हमारे जल स्रोतों का प्रदूषण इस संपर्क-विकार की चुनौती और स्वास्थ्य बोझ को बढ़ा देता है। कचरे के मामले में भी यही हालात हैं। अवैध बस्तियों में कचरा निपटान का कोई इंतजाम नहीं होने से वे कचरे को जला देते हैं जिससे आसपास की हवा जहरीली हो जाती है।

यही वजह है कि भूमडंलीकरण का मॉडल हमारे लिए कारगर नहीं होगा। इस मॉडल ने उत्सर्जन का स्वरूप बदल दिया लेकिन उपभोग में कोई गिरावट नहीं आई। हम अपने घर के पीछे की तरफ रहने वाले गरीबों की ओर प्रदूषण को खिसका सकते हैं, हम पर्यावरण एवं श्रम की लागत भी कम कर सकते हैं लेकिन हमें इसका झटका सहना होगा। यह काम कोई और नहीं करेगा। इस तथ्य से भागा नहीं जा सकता है। आज चीन जिस तरह से पश्चिमी दुनिया के प्लास्टिक एवं अन्य अवशिष्टों के लिए अपने दरवाजे बंद कर रहा है, उससे यही लगता है कि उसे इन अवशिष्टों के निपटान से जुड़े दर्द का अहसास हो रहा है। अमेरिका के अपेक्षाकृत विपन्न इलाकों में कचरा निपटान केंद्र लगाए जाने का अब लगातार विरोध हो रहा है। लोग अपने पिछवाड़े में उत्सर्जन होने के पक्ष में नहीं हैं। ऐसा कौन करेगा? यह अपने आप में एक चुनौती है।

इसी वजह से मैं यह कहती रही हूं कि मध्यवर्गीय पर्यावरणवाद भारत में काम नहीं करेगा। हमारे लिए संवहनीयता का अर्थ समावेशी एवं वहन की जा सकने वाली वृद्धि से है। लेकिन संभवत: तकनीकी समाधान की वकालत करने वाले और समस्या को दूसरे क्षेत्रों की तरफ धकेलने में यकीन रखने वाले सिद्धांत 'मध्यवर्गीय पर्यावरणवाद' का युग अब खत्म हो जाएगा। हम अपने अवशिष्टों को किसी अन्य ग्रह पर तो ले नहीं जा सकते हैं। हमें यह समझने का वक्त आ चुका है।

कानाफूसी

पुस्तकालय बना एकांतवास

भारतीय जनता पार्टी के सांसद वरुण गांधी का कहना है कि जब जब वह संसद के पुस्तकालय में जाते हैं, वहां का पुस्तकालयाध्यक्ष मारे प्रसन्नता के उन्हें गले लगा लेता है। उन्होंने कहा कि ऐसा इसलिए होता है क्योंकि कई-कई दिनों तक कोई सांसद वहां नहीं जाता है। हैदराबाद में इंडियन स्कूल ऑफ बिजनेस पॉलिसी के एक आयोजन में उन्होंने कहा कि संसद का पुस्तकालय शायद इस धरती का सबसे एकांत स्थान होगा। उन्होंने यह भी कहा कि एक ओर जहां देश में युवाओं का बोलबाला है, वहीं सांसदों की औसत उम्र बढ़ रही है। उन्होंने यह भी कहा कि इसी अनुपात में सांसदों का औसत वेतन भी बढ़ रहा है। गांधी ने जानकारी दी कि सन 1952 के बाद से लगभग हर कार्यकाल में सांसदों का वेतन बढ़ता आया है।

सुरक्षित भारत

कांग्रेस महासचिव प्रियंका गांधी वाड्रा ने बलात्कार और यौन हिंसा की शिकार 40 महिलाओं से बीते शुक्रवार को नई दिल्ली स्थित अपने आवास पर मुलाकात की। ये महिलाएं गरिमा यात्रा का हिस्सा थीं जिसमें देश भर की सैकड़ों यौन हिंसा से पीड़ित महिलाओं ने हिस्सा लिया और वे दो माह की अवधि में नई दिल्ली पहुंचीं ताकि उनकी आवाज सुनी जाए। जब इस प्रतिनिधिमंडल ने प्रियंका गांधी से मुलाकात की तो उन्होंने न केवल सभी पुरुषों को उस कक्ष से बाहर निकाल दिया बल्कि अपनी टीम को इस मुलाकात की तस्वीर तक नहीं खींचने दी। मुलाकात के बाद इन महिलाओं के समूह ने ट्वीट करके बताया कि उन्होंने अपनी कहानी प्रियंका से साझा की और प्रियंका ने एक सुरक्षित भारत को लेकर अपना नजरिया उनसे साझा किया। गरिमा यात्रा ने अपने ट्विटर हैंडल से लिखा कि इस लक्ष्य को पाने के लिए उन्हें समाज के हर वर्ग का समर्थन चाहिए।

आपका पक्ष

पीएम किसान योजना भूमिहीनों को नहीं

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने गत रविवार को पीएम किसान योजना का शुभारंभ गोरखपुर से किया। इसके तहत दो हेक्टेयर से कम जोत वाले किसानों को तीन किस्तों में सालाना कुल 6,000 रुपये दिए जाएंगे। इस योजना से देश के करीब 12.5 करोड़ किसानों को लाभ होगा। इस योजना में भूमिहीन किसानों के लिए कोई प्रावधान नहीं किया गया है। अर्थात सरकार उन्हीं को किसान मानती है जिनके पास खेत हैं। दरअसल भूमिहीन किसान वे लोग हैं जो किसी के खेत में खेती करते हैं और इसके एवज में उन्हें उपज में हिस्सा या नकद राशि मिलती है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (एनएसएसओ) के आंकड़ों के अनुसार देश के ग्रामीण इलाकों में करीब 1.2 करोड़ भूमिहीन किसान हैं। वहीं आंकड़ों के मुताबिक पीएम किसान योजना के तहत 12.5 करोड़ किसानों को इसका लाभ मिलेगा। यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि लाभ लेने वाले

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने रविवार को पीएम किसान योजना का शुभारंभ किया

किसानों की संख्या के बराबर संख्या में भूमिहीन किसान इस योजना से वंचित रह जाएंगे जबकि वास्तविक खेती भूमिहीन किसान ही करते हैं। इस योजना के तहत पात्र किसानों की पहचान राज्य सरकार पर डाली गई है। इसके अलावा खेत के जोत का निर्धारण करने के लिए 2015-16 की कृषि जनगणना की मदद ली जाएगी। हालांकि पीएम किसान योजना के लिए 75 हजार करोड़ रुपये का अनुमान लगाया गया है। अगर इस योजना में भूमिहीन किसानों को शामिल किया जाए तो यह दोगुना होकर 1.5 लाख करोड़ रुपये हो जाएगा। सरकार का यह कदम आगामी लोकसभा चुनाव को देखते हुए लिया गया माना जा सकता है। लोकसभा चुनाव से ठीक पहले किसानों को सौगात देने का कोई अन्य वजह नहीं हो सकती है। हालांकि इस योजना की घोषणा 1 फरवरी को अंतरिम बजट में ही की गई थी। लेकिन इस योजना का शुभारंभ गत रविवार को गोरखपुर में किया गया। योजना के शुभारंभ के साथ इस योजना से जुड़े किसानों के खाते में 2,000 रुपये आ गए और माना जा रहा है कि अप्रैल में इसकी दूसरी किस्त और 2,000 रुपये आ सकता है। इसी दौरान लोकसभा चुनाव भी होने को हैं। ऐसे में भाजपा पर किसानों को पैसा देकर लुभाने का आरोप भी लग सकता है। मोदी सरकार को भूमिहीन किसानों की मदद करने पर भी विचार करना चाहिए।

रितिका कुमारी, पटना

निर्माणाधीन मकानों पर जीएसटी दर घटा

जीएसटी परिषद की बैठक में निर्माणाधीन मकानों पर जीएसटी दर घटाने का फैसला किया गया है। परिषद ने 45 लाख रुपये से अधिक कीमत वाले फ्लैटों पर जीएसटी दर 12 प्रतिशत से घटाकर 5 प्रतिशत कर दी है। इससे मकान खरीदारों को कुल लागत में दिए जाने वाले जीएसटी में 7 प्रतिशत का फायदा मिलेगा। वहीं मध्य वर्ग या किफायती निर्माणाधीन मकानों पर जीएसटी 8 प्रतिशत से घटाकर एक प्रतिशत कर दिया है। इससे ग्राहकों को जीएसटी लागत में 7 प्रतिशत का फायदा होगा। हालांकि यह जीएसटी दर निर्माणाधीन मकानों पर लागू की गई है। सरकार को निर्माणाधीन मकान की परिभाषा की व्याख्या करने की जरूरत है। बिल्डर जब फ्लैट बेचता है तो मकान पूरी तरह से तैयार नहीं रहता है। वहीं आवास ऋण भी कई प्रकार के होते हैं। ऐसे में ग्राहकों को गुमराह भी किया जा सकता है।

मनीष कुमार, नोएडा

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।